

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 7 अध्याय 15: हमारे बीच भगवान्

14 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



युधिष्ठिर को नारद का महान प्रवचन यहाँ अपने शिखर पर पहुँचता है। सदाचरण की समूची कला सिखाने के पश्चात् — अहिंसा, सन्तोष, ध्यान, तथा आन्तरिक शत्रुओं पर विजय — वे पाण्डवों की ओर आश्चर्यजनक समाचार के साथ मुड़ते हैं: परम ब्रह्म, महानतम ऋषियों द्वारा खोजा जाने वाला, उनके अपने घर में ही निवास कर रहा है, उनके प्रिय मित्र तथा भाई श्रीकृष्ण के रूप में प्रच्छन्न।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

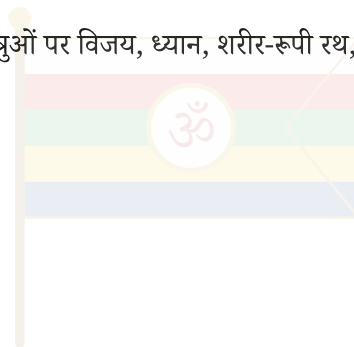
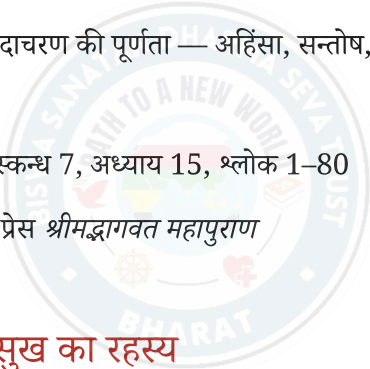
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। सप्तम स्कन्ध का यह पञ्चदश अध्याय सदाचरण पर नारद की दीर्घ शिक्षा को — तथा समूचे सप्तम स्कन्ध को — अपने तेजोमय समापन तक ले आता है, तथा समस्त शास्त्र के सर्वाधिक मार्मिक प्रसंगों में से एक तक पहुँचता है: यह प्रकटीकरण कि श्रीकृष्ण, पाण्डवों के बीच मित्र तथा बन्धु के रूप में विराजमान, स्वयं परम ब्रह्म ही हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 7 (सप्तम स्कन्ध)
- अध्याय: 15
- अध्याय-शीर्षक: सदाचरण की पराकाष्ठा
- मुख्य वक्ता: सिद्ध नारद
- मुख्य श्रोता: सम्राट युधिष्ठिर
- मुख्य स्थान: सम्राट युधिष्ठिर की सभा, श्रीकृष्ण की उपस्थिति में
- मुख्य विषय-वस्तु: सदाचरण की पूर्णता — अहिंसा, सन्तोष, आन्तरिक शत्रुओं पर विजय, ध्यान, शरीर-रूपी रथ, तथा यह प्रकटीकरण कि श्रीकृष्ण परम ब्रह्म हैं
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 7, अध्याय 15, श्लोक 1-80
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



सर्वोच्च गुण तथा सुख का रहस्य

नारद ने अनेक प्रकार के ब्राह्मणों को श्रेणीबद्ध करके आरम्भ किया — कर्मकाण्ड में लीन, तप में रत, अध्ययन में निष्ठ, और, सबसे ऊपर, ज्ञान तथा भक्ति में समर्पित। उन्होंने अर्पण तथा दान पर सावधान मार्गदर्शन दिया, फिर एक ऐसे सत्य पर पहुँचे जो समस्त कर्मकाण्ड से ऊपर है: कि जो सच्चे रूप से गुण चाहते हैं, उनके लिए मन, वाणी, तथा शरीर से समस्त प्राणियों के प्रति हिंसा के पूर्ण त्याग से बढ़कर कोई धर्म नहीं:

नैतादृशः परो धर्मो नृणां सद्धर्ममिच्छताम् ।

न्यासो दण्डस्य भूतेषु मनोवाक्कायजस्य यः ॥ ८ ॥

naitādṛśaḥ paro dharmo nṛṇāṃ sad-dharmam icchatām nyāso daṇḍasya bhūteṣu mano-vāk-kāyajasya yaḥ

अर्थ: जो सच्चे धर्म की कामना करते हैं, उन मनुष्यों के लिए प्राणियों के प्रति समस्त हिंसा के त्याग से — मन, वाणी, तथा शरीर से उत्पन्न हिंसा से — बढ़कर कोई श्रेष्ठ धर्म नहीं। (SB 7.15.8)

फिर उन्होंने सन्तोष को सुख की ही भूमि के रूप में प्रशंसित किया। सन्तुष्ट आत्मा, स्व में आनन्दित, हर दिशा में आनन्द पाती है, जबकि लोभी सब दिशाओं में स्वयं को थका डालते हैं और कभी पहुँचते नहीं। असन्तोष, उन्होंने चेताया, एक ब्राह्मण की विद्या तथा तप तक को विलीन कर देता है; और लोभ अकेला, समस्त विकारों में, कभी तृप्त नहीं होता — समूची पृथ्वी की विजय से भी नहीं।



नारद सिखाते हैं कि समस्त प्राणियों के प्रति अहिंसा सर्वोच्च गुण है, और कि सन्तुष्ट आत्मा, स्व में आनन्दित, हर दिशा में सुख पाती है (SB 7.15.8-17)।

आन्तरिक शत्रुओं पर विजय

तब नारद ने आन्तरिक रणभूमि का मानचित्र बनाया। कामना दृढ़ संकल्प से जीती जाती है, क्रोध ईर्ष्या का त्याग करके, लोभ धन को दुःख का स्रोत देखकर, भय सत्य का विवेचन करके, शोक तथा मोह आत्मा को पदार्थ से पृथक् करके, और मिथ्या अहंकार महान आत्माओं की सेवा से (श्लोक २२-२४)। किन्तु हर विशिष्ट उपाय से ऊपर उन्होंने एक मुख्य कुंजी रखी: कि रजस् तथा तमस् के गुण सत्त्व से जीते जाते हैं, सत्त्व स्वयं वैराग्य से, और ये सब मिलकर, सरलता से, गुरु के प्रति भक्ति से:

रजस्तमश्च सत्त्वेन सत्त्वं चोपशमेन च ।

एतत्सर्वं गुरौ भक्त्या पुरुषो ह्यञ्जसा जयेत् ॥ २५ ॥

rajas tamaś ca sattvena sattvaṁ copāśamena ca etat sarvaṁ gurau bhaktyā puruṣo hy añjasā jayet

अर्थ: मनुष्य रजस् तथा तमस् को सत्त्व से जीतता है, और सत्त्व को शान्त वैराग्य से; किन्तु इन सबको वह गुरु के प्रति भक्ति से सरलता से जीत लेता है। (SB 7.15.25)

क्योंकि गुरु, नारद ने समझाया, कोई साधारण मर्त्य नहीं अपितु मानव-रूप में स्वयं भगवान् हैं — ठीक वैसे ही जैसे श्रीकृष्ण, उनके सम्मुख विराजमान तथा संसार द्वारा एक साधारण मनुष्य समझे गए, वस्तुतः परम भगवान् हैं जिनके चरण योगेश्वरों तक द्वारा खोजे जाते हैं।

नारद इस बात को और आगे बढ़ाते हैं, और यही इस समूचे अध्याय की धुरी है: गुरु को साक्षात् परम भगवान् के समान माना जाना चाहिए, क्योंकि वे ही दिव्य ज्ञान का दीपक प्रज्वलित करते हैं, और जो शिष्य उन्हें साधारण मनुष्य समझकर त्याग देता है, उसका समस्त ज्ञान तथा तप व्यर्थ हो जाता है — ठीक उस हाथी के समान जो सावधानी से स्नान करके तट पर पहुँचते ही अपने ऊपर धूल डाल लेता है (श्लोक २६-२७)। यह तर्क चापलूसी नहीं, अपितु एक चेतावनी है। जो दृष्टि से साधारण प्रतीत होता है — एक गुरु, एक भाई, एक मित्र — वह वास्तव में भगवान् के ही अधिकार को धारण कर सकता है, या, जैसा इस अध्याय की पराकाष्ठा आगे दर्शाएगी, स्वयं भगवान् ही हो सकता है। बाह्य परिचय कभी भी आन्तरिक दिव्यता के अभाव का प्रमाण नहीं।

शरीर-रूपी रथ

साधक को मुक्ति की ओर स्वयं को कैसे हँकना है, यह दिखाने के लिए, नारद ने रथ का प्राचीन बिम्ब प्रस्तुत किया। शरीर रथ है, इन्द्रियाँ उसके अश्व, मन लगाम, बुद्धि सारथि, और शुद्ध स्व वह बाण जिसे परम को लक्ष्य बनाकर छोड़ना है:

आहुः शरीरं रथमिन्द्रियाणि

हयानभीषून्मन इन्द्रियेशम् ।

वर्तमानि मात्रा धिषणां च सूतं

सत्त्वं बृहद् बन्धुरमीशसृष्टम् ॥ ४१ ॥

āhuḥ śarīraṁ ratham indriyāṇi hayān abhīṣūn mana indriyeśam vartmāni mātṛā dhiṣaṇām ca sūtaṁ sattvaṁ bṛhad bandhuraṁ īśa-sṛṣṭam

अर्थ: ज्ञानी शरीर को रथ कहते हैं, इन्द्रियों को उसके अश्व, मन को — इन्द्रियों के स्वामी को — लगाम, इन्द्रिय-विषयों को मार्ग, बुद्धि को सारथि, और महान अन्तःकरण को आसन — सब भगवान् द्वारा रचित। (SB 7.15.41)

जब तक शरीर-रूपी रथ उसके वश में है, नारद ने सिखाया, साधक को भीतर के शत्रुओं का वध कर देना चाहिए — राग तथा द्वेष, लोभ, शोक, भय, तथा अहंकार — विवेक की तलवार चलाते हुए, जो महान आत्माओं के चरणों की पूजा से तीक्ष्ण हुई और अच्युत भगवान् की शरण से बलवान बनी। अन्यथा इन्द्रियों के उच्छृंखल अश्व असावधान आत्मा को अनन्त पुनर्जन्म के गर्त में घसीट ले जाते हैं।



नारद रथ का बिम्ब देते हैं: शरीर रथ है, इन्द्रियों उसके अश्व, मन लगाम, और बुद्धि सारथि — जिसे विवेक की तलवार से भगवान् की ओर हाँकना है (SB 7.15.41-45)।

ध्यान तथा दो मार्ग

नारद ने मन को वश में करने के इच्छुक के लिए ध्यान का मार्ग वर्णित किया: एक स्वच्छ, एकान्त स्थान में जाना, सीधे तथा स्थिर बैठना, पवित्र ॐ का जप करना, श्वास को नियन्त्रित करना, और अशान्त मन को हर उस विषय से कोमलता से खींच लाना जिसके पीछे वह दौड़ता है। ऐसा मन, उन्होंने कहा, शीघ्र ही शान्त हो जाता है — उस अग्नि के समान जो ईंधन के समाप्त होने पर बुझ जाती है — और, परम के आनन्द में लीन होकर, फिर कभी विचलित नहीं होता। फिर उन्होंने प्रयाण करती आत्माओं के लिए खुले दो महान मार्ग खोले: सकाम कर्म का “श्याम मार्ग”, जो पुनर्जन्म में लौटा लाता है, और आन्तरिक, भगवान्-अभिमुख कर्म का “उज्ज्वल मार्ग”, जो मुक्ति में पराकाष्ठा पाता है।



नारद ध्यान का मार्ग वर्णित करते हैं — स्वच्छ स्थान में स्थिर बैठना, ॐ का जप, श्वास का नियन्त्रण, और मन को भीतर खींचना जब तक वह उस अग्नि के समान शान्त न हो जाए जिसका ईंधन समाप्त हो चुका है (SB 7.15.30-35)।

तीन अद्वैत तथा घर में भक्त

शिक्षा को उसके व्यावहारिक हृदय की ओर ले जाते हुए, नारद ने अद्वय जीवन के तीन रूप बताए। विचार का अद्वैत — समस्त प्रतीत भेद के पीछे एक ही सत्य को देखना; हित का अद्वैत (द्रव्याद्वैत) — अपने परिवार तथा समस्त प्राणियों के कल्याण को अपना ही मानना; और, सबसे सुन्दर, कर्म का अद्वैत — मन, वाणी, तथा शरीर के हर कर्म को सीधे परम को अर्पित करना:

यद् ब्रह्मणि परे साक्षात्सर्वकर्मसमर्पणम् ।
मनोवाक्तनुभिः पार्थ क्रियाद्वैतं तदुच्यते ॥ ६४ ॥

yad brahmaṇi pare sākṣāt sarva-karma-samarpaṇam mano-vāk-tanubhiḥ pārtha kriyādvaitam tad ucyate

अर्थ: समस्त कर्मों का — मन, वाणी, तथा शरीर के — परम ब्रह्म को प्रत्यक्ष अर्पण: यही, हे पृथानन्दन, कर्म का अद्वैत कहलाता है। (SB 7.15.64)

ऐसे जीवन से, नारद ने युधिष्ठिर को आश्चस्त किया, एक भक्त गृहस्थ बिना घर छोड़े श्रीकृष्ण के अपने धाम तक पहुँच सकता है — ठीक वैसे ही जैसे पाण्डवों ने स्वयं श्रीकृष्ण की कृपा से विपत्तियों का सागर पार किया, और संसार-सागर भी अवश्य पार करेंगे। उन्होंने अपनी कथा भी साझा की: कैसे किसी पूर्व युग में वे उपबर्हण नामक एक गर्वित गन्धर्व थे, अनादर के कारण शूद्र-जन्म का शाप पाया, और कैसे, ऋषियों की विनम्र सेवा से, अन्ततः ब्रह्मा के पुत्र बने — इस प्रमाण के रूप में कि भक्ति का मार्ग किसी भी आत्मा को उठा सकता है।

आपके बीच भगवान्

तब वह प्रकटीकरण आया जिसकी ओर समूचा प्रवचन बढ़ रहा था। नारद ने पाण्डवों को परम भाग्यशाली घोषित किया — क्योंकि संसार को पवित्र करते ऋषि उनके घर आते हैं, चूँकि परम ब्रह्म स्वयं वहाँ, मानव-रूप में छिपे, निवास करते हैं:

यूयं नृलोके बत भूरिभागा
लोकं पुनाना मुनयोऽभियन्ति ।
येषां गृहानावसतीति साक्षाद्
गूढं परं ब्रह्म मनुष्यलिङ्गम् ॥ ७५ ॥

yūyaṁ nṛ-loke bata bhūri-bhāgā lokam punānā munayo 'bhiyanti yeṣāṁ gṛhān āvasatīti sākṣād gūḍham param brahma manuṣya-liṅgam

अर्थ: निश्चय ही, हे पाण्डवो, आप इस मनुष्य-लोक में परम भाग्यशाली हैं — क्योंकि समूचे संसार को पवित्र करते ऋषि आपके घर आते हैं, चूँकि परम ब्रह्म स्वयं, मानव के रूप में छिपे, वहाँ निवास करते हैं। (SB 7.15.75)

और कहीं यह सन्देह न रहे कि वे किसकी बात कर रहे हैं, नारद ने उन्हें स्पष्ट नाम दिया: यही श्रीकृष्ण — उनके प्रिय मित्र, उनके भाई, उनके विश्वस्त सेवक तथा सारथि, उनके पूज्य मार्गदर्शक — परम ब्रह्म हैं, परम आनन्द का साक्षात्कार, महानतम आत्माओं द्वारा भी यत्नपूर्वक खोजे जाने वाले:

स वा अयं ब्रह्म महद्विमृग्य
कैवल्यनिर्वाणसुखानुभूतिः ।
प्रियः सुहृद् वः खलु मातुलेय
आत्मारहणीयो विधिकृद्गुरुश्च ॥ ७६ ॥

sa vā ayaṁ brahma mahad-vimṛgya- kaivalya-nirvāṇa-sukhānubhūtiḥ priyaḥ suhṛd vaḥ khalu mātuleya ātmārhaṇīyo vidhi-kṛd guruś ca

अर्थ: यही परम ब्रह्म हैं, महान आत्माओं द्वारा खोजे जाने वाले, परम मुक्तिदायी आनन्द का साक्षात् अनुभव — आपके प्रिय मित्र, आपके भाई, आपके पूजनीय, आपके आज्ञाकारी सहायक तथा आपके मार्गदर्शक। (SB 7.15.76)



नारद प्रकट करते हैं कि परम ब्रह्म पाण्डवों के अपने घर में श्रीकृष्ण के रूप में निवास करते हैं, उनके प्रिय मित्र तथा बन्धु के रूप में, उनके बीच विराजमान (SB 7.15.75-76)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. अहिंसा सर्वोच्च गुण है। जो सच्चे रूप से कल्याण चाहते हैं, उन सबके लिए मन, वाणी, तथा शरीर से किसी भी प्राणी को हानि से मुक्ति से बढ़कर कोई धर्म नहीं (SB 7.15.8)।
2. सन्तोष सुख की भूमि है। सन्तुष्ट आत्मा सर्वत्र आनन्द पाती है; लोभी समूची पृथ्वी को जीतकर भी विश्राम नहीं पाते (SB 7.15.16-20)।

3. गुरु को साक्षात् भगवान् के समान माना जाना चाहिए। जो शिष्य गुरु को साधारण मनुष्य समझता है, उसका समस्त ज्ञान तथा तप व्यर्थ हो जाता है; आन्तरिक शत्रु भी सबसे सरलता से गुरु के प्रति भक्ति से ही जीते जाते हैं (SB 7.15.25-27)।

4. शरीर भगवान् की ओर हाँकने का रथ है। मन को लगाम तथा विवेक को तलवार बनाकर, और अच्युत की शरण लेकर, साधक इन्द्रियों को पार कर परम की ओर बढ़ता है (SB 7.15.41-45)।

5. भगवान् हमारे सोचने से अधिक निकट हो सकते हैं। परम ब्रह्म, ऋषियों द्वारा खोजे जाने वाले, पाण्डवों के घर में श्रीकृष्ण के रूप में रहते थे — इस स्मरण के रूप में कि भगवान् उपस्थित हैं, प्रायः सामने ही छिपे (SB 7.15.75-76)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के समापन पर एक शान्त विस्मय है। नारद ने अभी-अभी एक पावन जीवन की समूची संरचना प्रस्तुत की है — अहिंसा, सन्तोष, ध्यान, आन्तरिक शत्रुओं पर विजय, हर कर्म का भगवान् को अर्पण। यह एक विशाल तथा माँग करने वाला मार्ग है। और फिर, लगभग कोमलता से, वे पाण्डवों की ओर मुड़ते हैं और उन्हें बताते हैं कि इस समस्त प्रयास का लक्ष्य इतने समय से उनके अपने कक्ष में बैठा था। जिस परम को खोजने की उन्हें शिक्षा दी गई, वह उनका अपना प्रिय कृष्ण है — मित्र, भाई, सारथि — इतना निकट तथा इतना परिचित कि उन्होंने पूर्णतः समझा ही नहीं कि वे कौन हैं। कितनी बार हमारे साथ भी वैसा ही होता है। हम भगवान् को दूर स्थानों तथा कठिन साधनाओं में खोजते हैं, और वे इतने समय से हमारे निकटतम प्रेम तथा कर्तव्यों में उपस्थित रहते हैं, सामने ही छिपे। साधनाएँ व्यर्थ नहीं; वे हमारी आँखें खोलती हैं। किन्तु इस समापन की मधुरता उसका यह आश्वासन है कि जिस भगवान् को हम खोजते हैं वे दूर नहीं हैं। वे पहले से ही हमारे बीच हैं, पहचाने, पूजे, तथा प्रेम किए जाने की प्रतीक्षा में।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, वह “कर्म का अद्वैत” अभ्यास करें जिसे नारद नाम देते हैं: हर कर्म को — मन, वाणी, तथा शरीर के — करते समय भगवान् को अर्पित करें, बदले में कुछ भी अपेक्षा किए बिना, भीतर कहते हुए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” साथ ही, सच्ची अहिंसा का एक कर्म चुनें — कठोर के स्थान पर कोमल वचन, प्रतिशोध के स्थान पर धैर्य, ज़रूरतमन्द प्राणी पर दया। और दिन समाप्त होने से पूर्व, सामने ही छिपे भगवान् को खोजें: किसी परिवारजन, मित्र, या अतिथि में, अपने निकट निवास करते कृष्ण की उपस्थिति का सम्मान करें।

उपसंहार

सप्तम स्कन्ध का पञ्चदश अध्याय नारद की शिक्षा को, तथा समूचे स्कन्ध को, अपने एक ही गहनतम भाव पर समाप्त करता है: जिस भगवान् को हम साधना तथा वैराग्य द्वारा जीवन भर खोजते हैं, वे शायद पहले से ही हमारे निकट, अपरिचित बैठे हों। नारद ने प्रकट किया कि परम ब्रह्म, जिन्हें महानतम ऋषि भी कठिनाई से देख पाते हैं, इतने समय से पाण्डवों के घर में उनके प्रिय श्रीकृष्ण के रूप में निवास कर रहे थे। सप्तम स्कन्ध, जो एक भक्त के प्रेम से भगवान् को पृथ्वी पर आकर्षित करने के प्रसंग से आरम्भ हुआ, यहाँ इस भाव के साथ समाप्त होता है कि भगवान् किसी दूर स्वर्ग में नहीं, अपितु पारिवारिक जीवन की सहज आत्मीयता में ही पाए जाते हैं। हम भी उन्हें उतना ही निकट पहचानना सीखें, सामने ही छिपे, प्रेम किए जाने की प्रतीक्षा में।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), सप्तम स्कन्ध, पञ्चदश प्रवचन, पृष्ठ 723–733।
- शृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या भाष्य का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा संबद्धता या समर्थन का कोई अभिप्राय नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-7-chapter-15-culmination-of-right-conduct-and-the-lord-among-us-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट